से यह स्पष्ट है। इन में सत्त्वगुणी के आहार—अनाज, फल, शाक, दुग्ध, शर्करा आदि एवं माँसाहारियों के माँसादि भोजन भी सम्मिलित हैं। इन में से किसी भी पदार्थ की संरचना मनुष्य स्वयं नहीं कर सकता। तेज, प्रकाश, जल आदि जीवनोपयोगी अन्य पदार्थों का सृजन भी मनुष्य नहीं कर सकता। परमेश्वर श्रीकृष्ण के बिना पर्याप्त सूर्यप्रकाश, चन्द्रप्रभा, परिवर्षण, समीर, आदि नहीं हो सकते और इन तत्त्वों के अभाव में जीवन नहीं रह सकता। स्पष्ट रूप से हमारा जीवन श्रीभगवान् द्वारा दी गई सामग्री पर पूर्ण रूप से आश्रित है। अपने उत्पादन सम्बन्धी उद्यम के लिए भी हमें धातु, खनिज आदि अपेक्षित हैं। श्रीभगवान् के अनुचर देवता हमें ये सब पदार्थ इसीलिए देते हैं कि इनके सदुपयोग से हम स्वस्थ रहकर स्वरूप साक्षात्कार के लिए साधन कर सकें और इस प्रकार अन्त में भवरोग के घोर संघर्ष से मुक्त हो जायें। यज्ञों के द्वारा जीवन के इस लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। इस पर भी यदि हम मानवीय जीवन के उद्देश्य को भुलाकर श्रीभगवान् के सेवकों द्वारा दिये गए इन पदार्थों से केवल अपनी ही इन्द्रियों की तृप्ति करते हैं, तो हमें अधिकाधिक बन्धन की ही प्राप्ति होगी, जो इस सृष्टि का प्रयोजन नहीं है। अतएव ऐसा करने वाला निश्चित चोर है और प्रकृति के नियमानुसार दण्डनीय भी। लक्ष्य-विहीन तस्कर समाज कभी सुखी नहीं हो सकता। विषयी चोरों के जीवन का कोई परम लक्ष्य नहीं होता। वे नित्य विषयभोगों के ही परायण रहते हैं, यहाँ तक कि यज्ञ का ज्ञान भी उन्हें नहीं होता। इसीलिए श्रीचैतन्य महाप्रभु ने सर्वाधिक सुगम यज्ञ—संकीर्तन का प्रवर्तन किया है। कृष्णभावनामृत को अंगीकार कर विश्व का प्रत्येक निवासी इस संकीर्तन यज्ञ में सम्मिलित हो सकता है।

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।।१३।।

यज्ञशिष्ट=यज्ञप्रसाद को; **अशिनः**=खाने वाले; **सन्तः**=भक्त; **मुच्यन्ते**=मुक्त हो जाते हैं; **सर्वकिल्बिषैः**=सब पापों से; **भुञ्जते**=भोगते हैं; **ते**=वे; **तु**=तो; **अघम्**=पाप को ही; **पापाः**=पापात्मा; **ये**=जो; **पचन्ति**=भोजन बनाते हैं; **आत्मकारणात्** = इन्द्रियसुख के लिए।

अनुवाद

यज्ञ से बचे अन्न का भोजन करने वाले भगवद्भक्त सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। पर जो इन्द्रियतृप्ति के लिए भोजन बनाते हैं, वे तो पाप ही खाते हैं।।१३।।

तात्पर्य

भगवद्भक्त अथवा कृष्णभावनाभावित महज्जनों को सन्त कहा जाता है। वे भगवत्प्रेम-पारावार में ही नित्य निमज्जित रहते हैं। जैसा ब्रह्मसंहिता में कहा है:
प्रेमाञ्जनच्छुरित भक्तिविलोचनेन सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति।

सर्वानन्द-प्रदायक भगवान् गोविन्द, मुक्ति-विलुण्ठक मुकुन्द, सर्वाकर्षी पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के प्रगाढ़ प्रेम से आविष्ट हृदय वाले सन्तजन उन परम पुरुषोत्तम को अर्पित